रामचरितमानस एवं एन.सी.एफ. – 2005 का विद्यालयी व्यवस्था के सम्बन्ध में दार्शनिक, समाजशास्त्रीय एवं शैक्षिक पक्षों के सन्दर्भों में विश्लेषणात्मक अध्ययन

An analytical study of Ramcharitmanas and NCF-2005 in terms of philosophical, sociological, educational aspect and its relevance in school system

पीएच.डी. (शिक्षा) उपाधि के लिए
पंजीकरण हेतु परिमार्जित शोध प्रस्ताव
(शिक्षा संकाय)

निर्देशक
डॉ. राकेश कटारा
रीडर
शिक्षा विभाग
(राजकीय उच्च अध्ययन शिक्षा संस्थान)
मीरशाह अली, अजमेर

शोधार्थी
जगवीर सिंह

महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय
अजमेर, 2015

3. Location (a) Institution / Department were the work is to be done – राजकीय उच्च अध्ययन शिक्षा संस्थान, अजमेर तथा महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय अजमेर के अन्तर्गत।

(b) Geographical area of Investigation, if any. अजमेर एवं पाली जिला।

4. Introduction Importance of Proposed Investigation Objectives :-

भारत में शिक्षा की परम्परा बहुत प्राचीन है, इतनी प्राचीन कि उसका प्रारम्भ कितने वर्ष पहले हुआ था – आज यह निश्चित रूप से बता सकना शायद सम्भव ही नहीं है। विश्व साहित्य में वेद प्राचीनतम ग्रंथ हैं,[1] और इस प्रकार वैदिक संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है। यजुर्वेद में कहा भी है, "सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्व वारा", यह विश्व की प्रथम संस्कृति है। मोहनजोदड़ो, हड़प्पा तथा अन्य स्थानों में हुई खुदाई से सिन्धु घाटी सभ्यता का जो रूप प्रकाश में आया है उसके सम्बन्ध में अभी यह पूरी तरह निश्चित नहीं हो पाया है कि वह वैदिक युग की ही है, या उससे पहले/बाद की/उसे कुछ विद्वान वैदिक युग से पहले का मानते हैं और कुछ वैदिक युग का ही मानकर उसे आर्यसभ्यता मानते हैं। वस्तुस्थिति जो भी हो, हमारे देश में शिक्षा की परम्परा निःसन्देह प्राचीन है। इस सम्बन्ध में डॉ. टॉमस के ये शब्द ध्यान देने योग्य हैं, "भारत में शिक्षा नई बात नहीं है। संसार का कोई भी देश ऐसा नहीं है जहाँ ज्ञान के प्रेम का उद्‌गम इतना प्राचीन हो अथवा उसका प्रभाव इतना चिरस्थायी और शक्तिशाली हो ।"[2] ज्ञान का यह चिरस्थायी और शक्तिशाली प्रभाव आज तक मौजूद है।

स्वतंत्रता के बाद देश में कई योजनाएँ, आयोग, नीतियाँ, फ्रेमवर्क आदि सामने आये जैसे–1948–49 में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग, 1953–54 में माध्यमिक शिक्षा आयोग, 1964–66 में कोठारी आयोग, 1986 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1992 में प्रोग्राम ऑफ एक्शन, N.C.F. SE 2000 आदि/इन सभी में शिक्षा के दर्शन, शिक्षा की

---

[1] पंडित रघुनंदन शर्मा, वैदिक सम्पत्ति, नई दिल्ली : दयानन्द संस्थान, 1983, पृष्ठ सं. 36–114

[2] F.W. Thomas, The History and Prospects of British Education in India, P.I.

समाजशास्त्रीय पृष्ठभूमि, शिक्षक व विद्यार्थी की अवधारणा, विद्यालय की अवधारणा, विभिन्न मानवीय मूल्यों, अध्ययन विषयों, व्यवस्थागत सुधारों आदि पर चर्चा की गई है। परन्तु आज जब हम देखते हैं तब हम हमारी शैक्षिक नीतियों, शैक्षिक दस्तावेजों आदि को दार्शनिक और धार्मिक ग्रन्थों से अलग पाते हैं। जबकि रामचरितमानस एक ऐसा समन्वयवादी ग्रन्थ है जिसे हम धार्मिक दृष्टि के अतिरिक्त दार्शनिक दृष्टि एवं शैक्षिक दृष्टि से भी अध्ययन कर सकते हैं, क्योंकि N.C.F. 2005 जिन शैक्षिक समस्याओं, दार्शनिक अवधारणाओं, समाजशास्त्रीय अनुशंसाओं, शिक्षक, शिक्षार्थी के सम्प्रत्यय, विद्यालय की अवधारणा, विभिन्न वैश्विक मूल्य, शिक्षण अधिगम की अवधारणा, व्यवस्थागत सुधारों आदि की बात करता है। इनमें से अधिकांश अवधारणाएँ रामचरितमानस के परिप्रेक्ष्य एवं संदर्भों से जुड़ी हुई है। लेकिन इसका उल्लेख स्वतंत्र भारत का कोई भी शैक्षिक दस्तावेज निष्पक्ष उल्लेख करने से बचता रहा है और उक्त सभी अवधारणाओं और तथ्यों को वह अन्ततोगत्वा मैकाले और उसके वंशजों की आत्मा के सहारे एक भारतीय दस्तावेज के शरीर में डालकर प्रस्तुत कर देता है। यह कहाँ तक सत्य है ? क्या N.C.F. 2005 और रामचरितमानस का विद्यालयी व्यवस्था के सम्बन्ध में दार्शनिक, सामाजिक व शैक्षिक अवधारणाओं में परस्पर कोई समानता है ? अथवा उच्चता या न्यूनता है ? क्या रामचरितमानस में वर्णित शिक्षा की अवधारणा, शिक्षक, शिक्षार्थी, विद्यालय, मूल्यों, शिक्षण अधिगम, अध्ययन विषयों, व्यवस्थागत सुधारों का N.C.F. 2005 से कोई सम्बन्ध है ? अथवा रामचरितमानस की उक्त अवधारणाएँ हमें N.C.F. 2005 या भविष्य में बनने वाले शैक्षिक दस्तावेजों से भी अधिक मार्गदर्शन देने की क्षमता रखती है ? अथवा रामचरितमानस केवल विशुद्ध धार्मिक ग्रन्थ है, उसका कोई अन्य शैक्षिक निहितार्थ नहीं है ? उक्त समस्त प्रकार के प्रश्नों का समाधान जानने के लिए प्रस्तुत अध्ययन की समस्या को रेखांकित किया गया है।

रामचरितमानस –

रामचरित मानस गोस्वामी जी की लोकप्रिय कृति भारत के कोटि–कोटि जनों का कण्ठहार है। यह ज्ञान का विशाल भण्डार है और राजनीतिक विचारों का आगार है। भक्ति प्रधान रचना होते हुए भी यह शैक्षिक विचारों से ओत–प्रोत है। यह ग्रन्थ केवल भक्ति, आध्यात्म, दर्शन और काव्य का ही ग्रन्थ नहीं है अपितु प्राचीन भारतीय

सम्मत शैक्षिक प्रणाली का भी दिग्दर्शक है। यह समाजशास्त्र, राजनीति, व्यवहारनीति, कूटनीति इत्यादि समस्त नीतियों का शास्त्र कहलाने का अधिकारी है। अपनी सभ्यता, संस्कृति और पुरातन शैक्षिक मूल्य जो गुरूकुल पद्धति में विभिन्न उच्च कोटि के दर्शन एवं मनोविज्ञान पर आधारित शैक्षिक विधियों द्वारा दी जाती थी कालान्तर में विस्मृत हो रही है उन्हें पुनःलागू करने की आवश्यकता है। अपनी विशिष्ट शिक्षा पद्धति के कारण ही भारत ने शताब्दियों तक न केवल विश्व का सांस्कृतिक नेतृत्व किया अपितु उद्योग–धन्धों, कला कौशल तथा विज्ञान के क्षेत्र में भी अग्रणी रहा।

आज आवश्यकता है रामचरित मानस के दोहे एवं चौपाइयों में निहित दार्शनिक, समाजशास्त्रीय एवं शैक्षिक पक्षों को समझने की, जन–जन में प्रसार करने की। मानस में उन्नत विचार, लोक शिक्षण, सांस्कृतिक एवं औद्योगिक शिक्षा का समन्वय, संस्थाओं का शान्त वातावरण एवं प्राकृतिक स्थान में आयोजन तथा उनकी पूर्ण स्वायत्तता अत्यंत उपयोगी है।

मानस में सामाजिक नीति –

सामाजिक नीति समाज और व्यक्ति के पारस्परिक सम्बन्ध पर प्रकाश डालती है। समाज का निर्माण किन–किन आधारशिलाओं पर होना चाहिए, समाज के प्रति व्यक्ति का निरपेक्ष भाव कहाँ तक संगत है, परम्परागत विश्वास एवं प्रथाएँ समाजोपयोगी है या नहीं, प्रभूति विषयों का उल्लेख सामाजिक नीति से सम्बन्ध रखता है। नारी, वर्ण, आश्रम, संत–असंत, प्रवृत्ति–निवृत्ति भाव, सामाजिक प्रथाएँ एवं परम्परागत विश्वास आदि सामाजिक विषयों पर तुलसी का दृष्टिकोण अतुलनीय है।

मानस में विश्व शान्ति –

मनुस्मृतिकार के अनुसार राजा साम, दान, दण्ड, भेद नीति का एक–एक करके अथवा सम्मिलित रूप से प्रयोग करके अन्य राज्यों को विजित करे, युद्ध द्वारा नहीं।

"साम्ना दानेन भेदेन समस्तैरथवा पृथक् विजेतुं प्रयतेतारीन्न युद्धेन कदार्चन"[3]

---

[3] रामचरित मानस लंकाकाण्ड – 8–10 / 37

तुलसीदास जी ने 'मानस' में यत्र–तत्र उपर्युक्त चारों नीति मार्गों के सम्बन्ध में अपने विचार अभिव्यक्त किये हैं। राम ने जब अंगद से रावण के चारों मुकुटों की प्राप्ति के विषय में प्रश्न किया तो अंगद ने उत्तर दिया – वे मुकुट नहीं, वे तो राजाओं के चार गुण है अर्थात् वेदोक्त नीति के चार–चरण साम,दान, दण्ड भेद हैं जो राजा के हृदय में निवास करते हैं।

सुनु सवज्ञ प्रनत सुखकारी । मुकुट न होंहि भूपगुन चारी।
साम दान उरू दण्ड विभेदा। नृप उर बसहिं नाथ कहं वेदा।
नीति धर्म के चरन सुहाये। अस जियँ जानि नाथ पहिं आए।।[4]

एक अन्य स्थान पर हनुमान ने जब देखा कि वानर राजा सुग्रीव राज्य प्राप्त कर राम के प्रति अपने कर्त्तव्य कर्म को भुला बैठे हैं तो उन्होंने सुग्रीव को नीति के चारों उपायों को समझाते हुए उसे राम के प्रति कर्त्तव्य निर्वाह की प्रेरणा दी।

"निकट जाई चरननि सिरू नावा, चरिहु विधि तेहि कहि समुझावा।।[5]

रामराज्य का वर्णन करते हुए गोस्वामी जी ने लिखा है कि राम के राज्य में केवल सन्यासी लोग आश्रम मर्यादा के निर्वहन के लिए 'दण्ड' हाथ में रखते थे। राजा को भी दण्ड देने की आवश्यकता नहीं पड़ती थी।

'दण्ड जतिन्ह कर भेद जँह, नर्तक नृत्य समाज।'[6]

यहाँ एक ओर राम राज्य का उत्कर्ष व्यंजित है वहीं दूसरी ओर तुलसी यह बताते हैं कि श्रेष्ठ राजा वह है जिसे दण्ड का आश्रय ही न लेना पड़े। उत्तम राजा केवल उसी परिस्थिति में दण्डनीति का आश्रय ले जब इसके अलावा कोई दूसरा विकल्प न हो।

---

[4] रामचरित मानस लंकाकाण्ड – 8–10/37

[5] रामचरित किष्किन्धा काण्ड – 2/18

[6] रामचरित उत्तराकाण्ड – 45

एक अन्य स्थान पर जब सुग्रीव सिंहासनारूढ़ हो राम के प्रति अपना कर्त्तव्य भुला बैठे तो लगा कि सुग्रीव को 'दण्डनीति' का आश्रय ले सन्मार्ग पर लायेंगे। उन्होंने कहा –

"जेहि सायक मारा मैं बाली। तेहि सर हतौं मूढ़ महँ काली"[7]

परन्तु उन्होंने सुग्रीव को दण्ड न देकर साम नीति का आश्रय लिया। नीतिज्ञ होने के कारण उन्होंने बिगड़े हुए मित्र को समझा–बुझाकर तथा भय दिखाकर ही सत्पथ पर लाना उचित समझा और लक्ष्मण को आदेश दिया कि सुग्रीव को भय दिखाकर यहाँ ले आओ –

"भय देखाई लै आवहु तात सखा सुग्रीव।"[8]

मानस में दार्शनिक पक्ष – ईश्वर को मिथ्यारूप में व जगत् को साक्षात रूप में देखते हैं परन्तु ऐसा नहीं होना चाहिए ईश्वर साक्षात् हैं जगत् मिथ्या। ईश्वर की व्यापकता पर रामचरित मानस बहुत जोर देता है।

हरिब्यापक सर्वत्र समाना। प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना।।
देश काल दिसि बिदिसिहु माहीं। कहहु सो कहाँ जहाँ प्रभु नाहीं।।
अग जगमय सब रहित बिरागी। प्रेम तें प्रभु प्रगटइ जिमि आगी।।
मोर बचन सब के मन माना। साधु साधु करि ब्रह्म बखाना।।
सुनि बिरंचि मन हरष तन पुलकि नयन बह नीर
अस्तुति करत जोरि कर सावधान मतिधीर।।[9]

जो प्रभु क्षीर सागर में रहते हैं वही हरि व्यापक भी हैं, जहाँ प्रेम किया जाय वहाँ ही प्रकट हो सकते हैं।

रामचरित मानस में पाठ्य सहगामी क्रियाएँ (पाठ्यक्रम)

---

[7] किष्किन्धाकाण्ड – 5/17

[8] रामचरित किष्किन्धाकाण्ड दोहा – 2/18

[9] मानस रहस्य (गीता प्रेस गोरखपुर) पृष्ठ संख्या 30

पाठ्यचर्या तो उददेश्यों की प्राप्ति का साधन होती है। मनुष्य के शारीरिक विकास हेतु खेलकूद, व्यायाम और योगिक क्रियाओं,मानसिक एवं बौद्धिक विकास हेतु भाषा, कला, संगीत, नृत्य, इतिहास, भूगोल, राजनीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र, ग़णित और विज्ञान विषयों का अध्ययन भी जरूरी होता है।

रामायण में राजाओं के पाठ्य विषय लेखन, कूदना, फादना, तैरना, संख्या, गंधर्वविधा, न्याय, नीतिशास्त्र आदि हैं।[10]

महर्षि वाल्मीकी का आश्रम ललित कलाओं एवं साहित्य का शिक्षा केन्द्र था इसमें लवकुश के अलावा अनेक छात्र निवास करते थे वे वेदों के साथ–साथ संगीत की अभिनय कला में पारंगत होते थे।

मानस में समन्वयवादी दृष्टिकोण –

गोस्वामी जी भारतीय संस्कृति के रक्षक थे। भारतीय संस्कृति के जीवन मूल्यों तथा आदर्शों का सुन्दर निरूपण इस ग्रन्थ में हुआ है। उन्होंने अपने इस ग्रन्थ में हिन्दू धर्म में प्रचलित आडम्बर तथा पाखण्डों का खण्डन करते हुए धर्म की व्यापकता पर बल दिया है। गोस्वामी जी भारतीय संस्कृति के रक्षक होने के साथ–साथ महान समाज सुधारक भी थे। जिस समय तुलसी जी ने अपने ग्रन्थ लिखे उस समय समाज पतनोन्मुख हो रहा था। सदाचार पर दुराचार की विजय हो रही थी और धर्म का भय लोगों के हृदय से ही निकल गया था। ऐसी स्थिति में गोस्वामी जी ने समाज के उद्धार का बीड़ा उठाया। उन्होंने अपने रामचरित मानस में विभिन्न पात्रों के चरित्र चित्रण द्वारा या तो भारतीय संस्कृति के किसी आदर्श का निरूपण किया या किसी सामाजिक बुराई पर प्रहार किया है। तुलसी ने समाज में प्रचलित बुराईयों को कलियुग में तथा अच्छाईयों को रामराज्य में दिखाकर लोगों को यह बताने का प्रयास किया कि समाज में क्या अच्छा है और क्या बुरा है। व्यवस्थित समाज के लिए उन्होंने मर्यादा पालन की आवश्यकता पर बल दिया तथा राम के चरित्र द्वारा समाज के समक्ष मर्यादा का आदर्श रखा। रामचरित–मानस में मर्यादा का तनिक भी उल्लंघन नहीं हुआ है।

[10] वाल्मीकि रामायण – 1.80.26

पारिवारिक जीवन में माता–पिता, भाई, पति, पत्नी, सखा, सेवक आदि सभी रूपों का स्वर्णिम आदर्श प्रस्तुत किया है। गोस्वामी जी समाज में जाति–पाँति के विरोधी थे। उन्होंने शुद्र और ब्राह्मणों में किसी प्रकार का भेदभाव नहीं आने दिया। वास्तव में गोस्वामी जी का विचार था कि जिस प्रकार छोटी जाति या स्थिति वालों की रक्षा करना उच्च वर्ग का कर्त्तव्य है, उसी प्रकार निम्न वर्ग का भी कर्त्तव्य है कि उच्च वर्ग वालों के प्रति श्रद्धा व सम्मान का व्यवहार करें। उन्होंने तत्कालीन समाज में प्रचलित अनेक धार्मिक परम्पराओं तथा जातियों में सुन्दर समन्वय स्थापित किया है। वैष्णव तथा शैव सम्प्रदायों में प्रचलित द्वेष भाव को मिटाने तथा दोनों विचारधाराओं को निकट लाने के लिए उन्होंने अपने ग्रन्थ रामचरित–मानस में राम के मुख से यह कहलाकर कि राम का भक्त होने के लिए शिव की भक्ति आवश्यक है और शिव द्रोही कभी भी राम का भक्त नहीं बन सकता। इसके साथ ही शिव के मुख से यह कहलाकर कि राम से बढ़कर शिव भक्त कोई नहीं है, राम की महिमा में वृद्धि करके दोनों सम्प्रदायों में समन्वय जाग्रत करने का सफल प्रयास किया। इसी प्रकार उन्होंने सीता में आदि शक्ति का रूप प्रतिष्ठित कर शाक्त सम्प्रदाय में भी समन्वय का प्रयत्न किया।

मानस में नैतिकता की शिक्षा –

तुलसी समाज में नैतिकता की शिक्षा पर बल देते हुए मानस में कहते हैं कि जो लोग माता, गुरू और स्वामी की शिक्षा को स्वाभाविक ही सिर चढ़ाकर उसका पालन करते हैं, उन्होंने ही जन्म लेने का लाभ पाया है। भारतीय संस्कृति के अनुसार सामाजिक जीवन की सफलता एवं परिपूर्णता हेतु नैतिकतापूर्ण पारिवारिक जीवन नितांत आवश्यक है।

> गुरू पितु मातु स्वामि हित बानी। सुनि मन मुदित करिअ भलि जानि।
> उचित कि अनुचित किए बिचारू। धरमु नाई सिर पातक भारू।।[11]

पारिवारिक जीवन की सुखमयता के लिए पति–पत्नी में पारस्परिक श्रद्धा, विश्वास एवं प्रेमभाव परम वांछनिय है। तुलसी ने मानस में दाम्पत्य प्रेम का बड़ा

[11] रामचरितमानस – 2/277/2

मर्यादित एवं सुन्दर चित्रण किया है। स्त्री के समान पुरूष वर्ग के लिए भी तुलसी "एक नारिव्रत रत सब झारी, ते मन बच क्रम पति हितकारी" की शिक्षा देते हैं।

जिस प्रकार पारिवारिक शान्ति एवं समृद्धि के लिए जैसे भ्रातृ व्यवहार महत्वपूर्ण है उसी प्रकार सामाजिक नीति के लिए मैत्री भाव आवश्यक बताया है। तुलसी ने मनुष्यों के लिए समाज में रहकर मैत्री भाव आवश्यक बताया है। अतः मित्र ऐसा होना चाहिए जो सुमार्ग में प्रवृत्त करे। श्रीराम परम मित्र के लक्षण इस प्रकार बताते हैं–

कुपथ निवारि सुपंथ चलावा। गुन प्रकटइ अवगुनन्हि दुरावा।
देत लेत मन संक न धरई। बल अनुमान सदा हित करई।
बिपति काल कर सतगुन नेहा। श्रूतिकह संत मित्र गुन एहा।[12]

अर्थात् मित्र वही होता है जो विपत्ति के समय सौ गुना स्नेह करे। वेदों के अनुसार यही सन्त मित्र के लक्षण हैं। मैत्री भाव भी सामाजिक नीति का एक दृढ़ स्तम्भ है।

राजनीति के क्षेत्र में भी गोस्वामी नैतिकता को आवश्यक मानते हैं। राजा को सदैव नीति निपुण एवं प्रजा वत्सल होना चाहिए। श्री राम लक्ष्मण को राजनीतिक नियमों का ज्ञान कराते हुए कहते हैं कि जिस राज्य में प्यारी प्रजा दुखी रहती है वह राजा अवश्य ही नरक का अधिकारी होता है–

जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी, सो नृप अवसि नरक अधिकारी।
रहहु तात असि नीति विचारी। सुनत लखनु भए व्याकुल भारी ।[13]

---

[12] रामचरितमानस – 4/7/2,3

[13] रामचरितमानस – 2/72/2,3

मानस में शिक्षण विधियाँ –

भारतीय शिक्षा के इतिहास के अनुशीलन से हमें विभिन्न प्रकार की शिक्षा पद्धतियों का परिचय मिलता है। औपनिषदिक शिक्षण पद्धति का स्वरूप निम्न श्लोक में प्रकट होता है–

श्रवणं तु गुरोः पूर्व मननं तदनन्तरम।
निदिध्यासन मित्येत्त पूर्ण बोधस्य कारेणम।।[14]

वृहदारण्यक उपनिषद में ज्ञानार्जन की श्रवण, मनन, तथा निदिध्यासन विधियों की जानकारी मिलती है। ठीक इसी प्रकार रामचरितमानस में इन शिक्षण विधियों के अलावा अन्य विधियों का वर्णन भी मिलता है।

प्रवचन व व्याख्यान विधि – श्रवण, मनन, निदिध्यासन

अन्य शिक्षण विधियाँ – मौखिक विधि (कंठस्थरी विधि), कथा कहानी विधि, सस्वर वाचन विधि, स्वाध्याय विधि, संवाद शैली (विचार–विनिमय), खेलविधि।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 एक परिचय

यह विद्यालय शिक्षा पर नवीनतम राष्ट्रीय दस्तावेज है। यह सुझाता है कि बच्चों के स्कूली जीवन को ज्ञान के बाहरी जीवन से जोड़ा जाना चाहिए, जिसमें जीवन एवं ज्ञान के मध्य की दूरी कम की जा सके साथ ही पढ़ाई को रटन्त प्रणाली से मुक्त कर बच्चों को चहुँमुखी विकास के अवसर प्रदान करते हुए शिक्षण को बाल केन्द्रित किया जा सके। बच्चे में ऐसी पहचान का विकास करना जिससे उसमें हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था एवं प्रदेश के प्रति गौरव का भाव जाग्रत हो।

NCF–2005 का गठन U.G.C. के पूर्व अध्यक्ष प्रोफेसर यशपाल की अध्यक्षता में हुआ। इसकी राष्ट्रीय संचालन समिति में 35 सदस्य थे, राष्ट्रीय संचालन समिति के साथ–साथ इसमें 21 राष्ट्रीय फोकस समूहों का गठन किया गया।

---

[14] तोमर, लज्जाराम, (2000) प्राचीन भारत शिक्षा दर्शन–सुरुचि प्रकाशन नई दिल्ली पृष्ठ संख्या 69–72

संवैधानिक पक्ष – बच्चों को इतना सक्षम बनाना कि वे जीवन का अर्थ समझ सकें और अपनी योग्यता का विकास कर सकें, अपने जीवन का एक उद्देश्य निश्चित करें और उसे प्राप्त करने का प्रयास करें तथा दूसरे व्यक्ति को भी ऐसा करने का अधिकार दें। शिक्षा को उन मूल्यों को प्रसारित करने में सक्षम होना चाहिए जो शान्ति, मानवता और सांस्कृतिक–विविधता वाले समाज में सहिष्णुता को अवधारणा को रखने पर इसमें राष्ट्र को स्वस्थ रखने व ऊर्जा प्रदान करने की क्षमता है। अपनी सांस्कृतिक विरासत और राष्ट्रीय अस्मिता को सुदृढ़ करने के लिए पाठ्यचर्या ऐसी होनी चाहिए जो युवा पीढ़ी को इसके लिए सक्षम बना सके कि वे नयी प्राथमिकताओं व बदलते सामाजिक संदर्भ में उभरते दृष्टिकोणों के परिप्रेक्ष्य में अतीत का पुनर्मूल्यांकन व पुनर्व्याख्या कर पाए। इस भूमि की सांस्कृतिक विविधता को हमारी विशिष्टता की तरह संजोए रखना चाहिए। इस संदर्भ में युवा पीढ़ी में अपने कर्त्तव्यों एवं अधिकारों के प्रति एक नागरिक चेतना व संविधान में निहित सिद्धान्तों के प्रति प्रतिबद्धता की रचना पूर्वापेक्षित है।

शिक्षा के समक्ष सबसे बड़ी राष्ट्रीय चुनौती है, हमारे सहभागिता–आधारित लोकतंत्र व संविधान में प्रतिस्थापित मूल्यों को सुदृढ़ करना। नागरिकता का प्रशिक्षण औपचारिक शिक्षा का महत्वपूर्ण पहलू रहा है। एक नागरिक के लिए यह आवश्यक है कि समाज में भाईचारे की भावना प्रोत्साहित करने के लिए वह समानता, न्याय व स्वतंत्रता के सिद्धान्तों को आत्मसात करे। भारत एक धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक गणराज्य है, लेकिन साथ ही भारतीय गणराज्य किसी आस्था विशेष को अपेक्षाकृत अधिक श्रेष्ठ नहीं मानता। आज बच्चों में सभी लोगों के प्रति चाहे वे किसी भी धर्म के हों, समान आदरभाव पोषित करने की जरूरत है।

समाजशास्त्रीय पक्ष –समकालीन सामाजिक यथार्थ में पाठ्यचर्या के नवीनीकरण की प्रक्रिया में आने वाली चुनौनियों को सन्दर्भ में रखकर यह दस्तावेज उन समस्याओं की ओर ध्यान आकर्षित करता है जिनके लिए कल्पनाशील प्रतिक्रियाओं की आवश्यकता है। शिक्षा व्यवस्था उस समाज से अलग–थलग होकर काम नहीं करती जिसका वह भाग है। जातिगत, आर्थिक तथा स्त्री–पुरूष संबंधों का पदानुक्रम, सांस्कृतिक विविधता और असमान विकास से, जो भारतीय समाज की विशेषताएँ है, शिक्षा की प्राप्ति और स्कूलों में बच्चों की सहभागिता प्रभावित होती है। भूमण्डलीकरण व समाज के हर क्षेत्र

में बाजार के संबंधों के फैलाव का शिक्षा के लिए महत्वूपर्ण निहितार्थ है। बढ़ती प्रतियोगिता के वातावरण के चलते, जिसमें स्कूल खिंचते चले जाते हैं और अभिभावकों की महत्वकांक्षाओं के कारण बहुत छोटे बच्चों समेत सभी बच्चों पर जबरदस्त दबाव पड़ता है और उनमें भयंकर तनाव पैदा होता है। इससे उनके वैयक्तिक विकास और सीखने के आनंद में बाधा खड़ी होती है।

शैक्षिक पक्ष – वर्तमान समीक्षा पाठ्यचर्या और परीक्षाओं की तानाशाही के विवादास्पद मुद्दों के क्षेत्र में हुए सकारात्मक व नकारात्मक दोनों प्रकार के परिवर्तनों पर ध्यान देती है और नयी सदी के मोड़ पर स्कूली शिक्षा की भावी आवश्यकताओं को संबोधित करने का प्रयास करती है। इस सम्बन्ध में विभिन्न आयामों को ध्यान में रखा गया है जैसे–शिक्षा के लक्ष्य, बच्चों का सामाजिक परिप्रेक्ष्य, ज्ञान की प्रकृति, मानव विकास की प्रकृति और मनुष्य की सीखने की प्रक्रिया। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा की खासियत के रूप में प्रासंगिकता, लचीलापन तथा गुणवत्ता पर बल देते हुए पी.ओ. ए.ने एन.पी.ई. की इस दृष्टि को विस्तारित किया है। विभिन्न सामाजिक व आर्थिक पृष्ठभूमियों से आए विभिन्न शारीरिक, मनोवैज्ञानिक व बौद्धिक विशेषताओं वाले बच्चे स्कूल में सीखने व सफलता प्राप्त करने में सक्षम हों। इस संदर्भ में लिंग, जाति, भाषा, संस्कृति, धर्म या असमर्थता से जनित असमानताओं के परिणामस्वरूप शिक्षा में आई प्रतिकूलताओं की सीधे संबोधित करने की आवश्यकता है। पाठ्यचर्या में विस्तार करके उसमें ज्ञान, कार्य एवं शिल्प की विभिन्न परम्पराओं की समृद्ध विरासत को शामिल करना आवश्यक है। सौंदर्य व कला के विभिन्न रूपों को समझना व उसका आनंद उठाना, मानव जीवन का अभिन्न अंग है। कला, साहित्य और ज्ञान के अन्य क्षेत्रों में सृजनात्मकता का एक दूसरे से धनिष्ठ संबंध है। बच्चों की रचनात्मक अभिव्यक्ति और सौंदर्यात्मक आस्वादन की क्षमता के विस्तार के लिए साधन और अवसर मुहैया करना शिक्षा का अनिवार्य कर्त्तव्य है।

N.C.F. 2005 कहता है कि हमें विभिन्न विषयों के मध्य दीवारों को नीचे कर देना चाहिए ताकि बच्चों को ज्ञान का समग्र आनन्द मिल सके। पाठ्यपुस्तक में स्थानीय ज्ञान और पारस्परिक कौशल शामिल हो सके। शिक्षा में त्रिभाषा फार्मूले को लागू करने के लिए फिर से प्रयास करने का सुझाव दिया गया है। इसमें आदिवासी

भाषाओं सहित बच्चों की मातृभाषाओं को शिक्षा के माध्यम के रूप में स्वीकृति देने पर जोर है। प्रत्येक विद्यार्थी में बहुभाषिक प्रवीणता विकसित करने के लिए भारतीय समाज में बहुभाषिक चरित्र को एक संशोधन के रूप में देखना चाहिए। इसमें अंग्रेज़ी भाषा में प्रवीणता भी शामिल है। N.C.F. 2005 ने भाषा का प्रयोग संसाधन के रूप में किया है। यह तभी सम्भव है जब भाषा का मजबूत शिक्षा शास्त्र मातृभाषा के उपयोग पर आधारित हो। भाषा शिक्षण की दक्षताओं (सुनना, बोलना, पढ़ना, लिखना) को आरम्भिक कक्षाओं में ही विकसित करना चाहिए। यह विद्यार्थियों की प्रगाति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

गणित की शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो बच्चों के चिन्तन में तर्क तथा अमूर्त सम्बन्धों की संकल्पना करने और उनका व्यवहार करने में, समस्याओं को सूत्रबद्ध करके सुलझाने में उनकी सहायता करे। गणित में सफलता को हर बच्चे के अधिकार के रूप में देखा जाना चाहिए।

ज्ञान, कार्य को अनुभव में रूपान्तरित कर देता है। विद्यालय में बच्चों की कामयाबी उनके पोषण और सुनियोजित गतिविधियों के कार्यक्रमों पर निर्भर होती है इसलिए मिड–डे मिल या मध्याह्न भोजन योजना को मजबूत करना चाहिए। व्यवस्थागत सुधारों के संदर्भ में N.C.F. 2005 पंचायती राज व्यवस्था को मजबूत करने पर बल देता है। यह विद्यालय व्यवस्था और अन्य नागरिक समूहों के बीच सहभागिता की सिफारिश करता है।

परिप्रेक्ष्य

शिक्षा की राष्ट्रीय व्यवस्था को बहुलतावादी समाज में मजबूती प्रदान करना बिना बोझ के शिक्षा को सूझ के आधार पर विकसित करके पाठ्यचर्या के बोझ को कम करना। पाठ्यचर्या सुधार से सुसंगत व्यवस्था परिवर्तन करना। संविधान में उल्लेखित मूल्यों जैसे – सामाजिक न्याय, समता एवं धर्म निरपेक्षता पर आधारित पाठ्यचर्चा का अभ्यास करवाया जाये। सभी बच्चों के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सुनिश्चित करना। ऐसे नागरिक वर्ग का निर्माण करना जो लोकतांत्रिक व्यवहारों और लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति कटिबद्ध हो। लैंगिक न्याय के प्रति पिछड़े व विशेष आवश्यकता वाले

बच्चों की समस्याओं व उनकी आवश्यकताओं के प्रति संवेदनशील हो तथा उनमें राजनीतिक व आर्थिक प्रक्रियाओं में भाग लेने की क्षमता हो।

सीखना और ज्ञान

अध्यापन और अध्ययन सम्बन्धी हमारी समझ का पुनः आमुखीकरण करना। विद्यार्थियों के विकास एवं अधिगम के सम्बन्ध में सर्वांगीण दृष्टिकोण (स्वास्थ्य, सामाजिक विकास, चरित्र आदि) का विकास करना। कक्षा में सभी विद्यार्थियों के लिए समावेशी वातावरण तैयार करना। (हर बच्चे को कक्षा में सीखने का अधिकार मिले)। ज्ञान निर्माण में विद्यार्थियों की सहभागिता और रचनात्मकता को बढ़ाना। प्रयोगशाला माध्यमों द्वारा सक्रिय शिक्षण करवाना। पाठ्यचर्या की प्रक्रियाओं में बच्चे की सोच, जिज्ञासा और प्रश्नों के लिए पर्याप्त स्थान होना चाहिए। ज्ञान को आनुवांशिक सीमाओं के पार जोड़ते हुए अन्तर्दृष्टिपूर्ण निर्माण करना चाहिए। अवलोकन, अन्वेषण, विश्लेषणात्मक विचार विमर्श आदि में विद्यार्थियों की सहभागिता लेते हुए ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। स्थानीय ज्ञान एवं बच्चों के अनुभव पाठ्यपुस्तकों और अध्यापन प्रक्रियाओं के महत्वपूर्ण अंग है। पर्यावरण सम्बन्धी प्रोजेक्ट से जुडे विद्यार्थी भारतीय पर्यावरण के सार्वजनिक आँकड़ों को तैयार करने में सहायक हो सकते हैं। विद्यालय के वर्ष विद्यार्थियों की तीव्र वृद्धि का दौर होता है। उनकी क्षमताओं, अभिरूचियों और दृष्टिकोणों में बहुत बदलाव आते हैं। इसलिए विषयवस्तु के चुनाव एवं व्यवस्था को तथा ज्ञान निर्माण की प्रक्रियाओं को विद्यार्थियों के हिसाब से अनुकूलित करना चाहिए।

पाठ्यचर्या के क्षेत्र, स्कूल की अवस्थाएँ और आंकलन

भाषाएँ LSRW (सुनना, बोलना, पढ़ना, लिखना) का विकास करना, त्रिभाषा फार्मूले को लागू करना, मातृ भाषाओं के माध्यम से शिक्षण करवाना, आदिवासी भाषाओं को संरक्षित करना, अंग्रेजी भाषा को अन्य भारतीय भाषाओं के साथ–साथ अपनाना, बहुभाषात्मक प्रकृति को स्कूली जीवन की समृद्धि का संसाधन बनाना।

गणित :– गणित का मुख्य लक्ष्य विद्यार्थियों का गणितीकरण करना होना चाहिए। तार्किक तरिके से सोचने की क्षमता का विकास, अमूर्त सम्बन्धों का निर्माण करने की क्षमता, गणित की बेहतर शिक्षा और उसमें सफलता प्रत्येक बच्चे का हक होना चाहिए।

विज्ञान :– विज्ञान की भाषा, प्रक्रिया एवं विषयवस्तु विद्यार्थी की उम्र और उसकी ज्ञान की सीमा के अनुकूल होनी चाहिए। विज्ञान को अवबोध प्राप्त करने लायक रचनात्मक एवं जिज्ञासा से सम्पोषित करना चाहिए। विशेष कर पर्यावरण के सन्दर्भ में। विज्ञान की शिक्षा विद्यार्थियों के वातावरण के व्यापक संदर्भ के अनुकूल होनी चाहिए।

सामाजिक विज्ञान :– सामाजिक विज्ञान विषयवस्तु में अवधारणात्मक समझ पर ध्यान दिया जाना चाहिए। इससे उनके सामाजिक मुद्दों पर स्वतन्त्र तथा आलोचनात्मक रूप से सोचने का अवसर मिलेगा। नागरिक शास्त्र को राजनीति शास्त्र में बदल देना चाहिए ताकि इतिहास को बच्चे की अतीत तथा नागरिकता की पहचान की अवधारणा पर प्रभाव डालने वाले विषय के रूप में पहचान सके।

वर्क या काम की शिक्षा :– पूर्व प्राथमिक से लेकर उच्च माध्यमिक स्तर तक स्कूली पाठ्यचर्या को पुनर्गठित करने की आवश्यकता है। जिसमें ज्ञान अर्जन, मूल्यों का विकास और बहुविद् कौशलों के निर्माण के सन्दर्भ में ज्ञान की शिक्षाशास्त्रीय सम्भावनाओं को देखा जा सके।

कला शिक्षा :– संगीत,नृत्य, दृश्य कलाएँ, कठपुतली कला, मिट्टी की कला, नाटक कला, शास्त्रीय कलाओं को पाठ्यचर्या में समेकित घटकों के रूप में मान्यता मिलनी चाहिए। कला को स्कूल शिक्षा के हर स्तर पर शामिल करना चाहिए।

शान्ति शिक्षा :– स्कूल शिक्षा के दौरान उपयुक्त गतिविधियों के माध्यम से सभी विषयों में शान्ति के मूल्यों का संवर्धन करना चाहिए और उसे शिक्षण प्रशिक्षण का हिस्सा भी बनाना चाहिए।

स्वास्थ्य एवं शारीरिक शिक्षा :– स्वास्थ्य एवं शारीरिक शिक्षा विद्यार्थियों के समग्र विकास के लिए आवश्यक है तथा इसके माध्यम से स्कूल में नामांकन, उपस्थिति एवं ठहराव आदि की समस्या से निपटा जा सकता है।

आवास और अधिगम :– पर्यावरण शिक्षा सबसे अच्छी तरह विभिन्न अनुशासनों की शिक्षा के साथ उसके मुद्दों और चिन्ताओं को सभी स्तरों पर गतिविधियों के साथ जोड़कर दिया जाना चाहिए।

विद्यालय एवं कक्षा का वातावरण :– शिक्षकों के प्रदर्शन को सुधारने के लिए ढाँचागत और भौतिक सामग्री की उपलब्धता आवश्यक है तथा शिक्षण की दैनिक योजना को लचीला बनाने की आवश्यकता है। ऐसी विशिष्ट गतिविधियों का आयोजन किया जाए जिसमें सक्षम और विभिन्न अक्षमता को झेल रहे बच्चे भी भाग ले सके अर्थात् प्रत्येक बच्चा गतिविधि में भाग ले। लोकतांत्रिक तरीके द्वारा बच्चों के स्व–अनुशासन का विकास होना चाहिए। ज्ञान की प्रक्रिया में समुदाय के लोगों को शामिल किए जाने से स्कूल और समुदाय में साझेदारी होने लगती है। सीखने के लिए संसाधनों के बारे में पुनर्निर्माण करने की आवश्यकता है। इसके लिए पाठ्यपुस्तकों में अवधारणाओं की व्याख्या, गतिविधियाँ और समस्याएँ इस प्रकार से दी जाए कि विद्यार्थी के चिन्तन और समूह कार्य को बढ़ावा मिले। सहायक पुस्तकें, कार्य पुस्तिकाएँ , शिक्षक मार्गदर्शिकाएँ अभिनव चिन्तन और नई दृष्टियों पर आधारित हो। शिक्षा को द्विध्रुवीय प्रक्रिया बनाने के लिए मल्टीमीडिया और सूचना और संचार तकनीकी के साधनों का प्रयोग करना चाहिए। स्कूल का पुस्तकालय विद्यार्थियों, शिक्षकों और समुदाय के लोगों के लिए ज्ञान को व्यापक बनाने के लिए होना चाहिए।

व्यवस्थागत सुधार

इसका प्रमुख लक्षण है गुणवत्ता की चिन्ता अर्थात् किसी संस्था में अपनी कमजोरियों की पहचान कर नई क्षमताओं का विकास करते हुए खुद को सुधारने की क्षमता हो। समान स्कूल व्यवस्था विकसित की जाए जिससे अलग–अलग पृष्ठभूमियों के बच्चे साथ–साथ पढ़ सके। प्रधानाध्यापक तथा शिक्षकों के सहयोग से सार्थक अकादमिक योजनाओं को विकसित किया जाए। अध्ययन – अध्यापन की परिस्थितियों को शिक्षकों के लिए उत्साहवर्द्धक, सहयोगी और मानवीय बनाया जाए। जिससे विद्यार्थियों को अपनी शारीरिक और बौद्धिक सम्भावनाओं को पूर्ण विकसित करने का मौका मिले। अध्यापक शिक्षा में भाषिक दक्षता को केन्द्र में रखा जाए और शिक्षक शिक्षा का समेकित मॉडल विकसित किया जाए ताकि अध्यापकों में अपने व्यवसाय को लेकर मजबूती आ सके। लोकतांत्रिक सहभागिता को साकार करने हेतु गाँव के स्तर पर समानान्तर संस्थाओं के क्रियाकलापों को नियंत्रित कर पंचायती राज संस्थाओं को मजबूती प्रदान की जा सकती है।

मूल्यांकन –

परीक्षा के कारण होने वाले तनाव में कमी लाई जा सकती है और सफलता को बढ़ाया जा सकता है। अतः परीक्षा और प्रश्नपत्र के वर्तमान स्वरूप को परिवर्तित करना आवश्यक है। हमें लघु– परीक्षाओं की ओर लचीली समय सीमा के साथ बदलाव करना चाहिए।

Objectives उद्देश्य –

1. रामचरितमानस का दार्शनिक, समाजशास्त्रीय एवं शैक्षिक पक्षों के सन्दर्भ में अध्यापकों के अभिमत में विश्लेषणात्मक अध्ययन करना।
2. N.C.F.– 2005 का दार्शनिक, समाजशास्त्रीय एवं शैक्षिक पक्षों के सन्दर्भ में अध्यापकों के अभिमत में विश्लेषणात्मक अध्ययन करना।
3. रामचरितमानस एवं N.C.F.–2005 के दार्शनिक, समाजशास्त्रीय एवं शैक्षिक पक्षों के सन्दर्भ में अध्यापकों के अभिमत में विद्यालयी व्यवस्था के सम्बन्ध में तुलनात्मक विश्लेषण का अध्ययन करना।

5. Review (Work already done on the subject of proposed Research Study.)

रामचरितमानस से सम्बद्ध पूर्व शोधों और कार्यों की समीक्षा

दास डॉ. पुरन्दर (1995), हिन्दी साहित्य में राम – पुराण ग्रन्थों में वर्णित रामकथाओं में भी रघुकुलोत्पन्न रामचन्द्र को शील–शक्ति–सौंदर्य के प्रतीक, मर्यादापुरूषोत्तम, प्रतिज्ञापालक, धर्म प्रचारक, नारी उद्वारक, आर्य संस्कृति के रक्षक, कर्मयोद्धा, दुष्टों का दलन करने वाले, युद्ध विजेता एवं कुशल प्रशासक के रूप में ही प्रस्तुत किया है किन्तु विशिष्ट बात यह हुई है कि पुराणकार महर्षि वेदव्यास ने राम को परब्रह्म परमेश्वर का अवतार सिद्ध कर उनमें देवत्व की प्रतिष्ठा कर दी है। उनके अनुसार राम ईश्वर के अवतार हैं जो रावणादि राक्षसों का संहार करके भूलोक को आसुरी शक्तियों के अत्याचारों से मुक्त करने के लिए आविर्भूत हुए हैं। पुराणों के राम अपने ब्रह्मत्व से परिचित हैं, वे माता कौशल्या को अपने विष्णु रूप का साक्षात् दर्शन भी कराते हैं।

पुराणकर्त्ता ने 'राम' के विभिन्न अलौकिक, चमात्कारिक, अद्भूत कार्यों का वर्णन करके उनके ईश्वरत्व की पुष्टि करते हुए उन्हें देवाधिदेव रूप में प्रतिष्ठित किया है। इस प्रकार ईसा के लगभग पाँच सौ वर्ष पूर्व 'राम' को ईश्वरावतार के रूप में माना जाने लगा था तथा उनकी पूजा अर्चना भी होने लगी थी।

शर्मा डॉ. जगदीश (1997), वाल्मीकि रामायण और रामचरितमानस सौन्दर्य–विधान का तुलनात्मक अध्ययन, पृष्ठ सं. 371, अशोक प्रकाशन दिल्ली 6 – वाल्मीकि रामायण और रामचरित मानस सौन्दर्य विधान का तुलनात्मक अध्ययन वाल्मीकी रामायण और रामचरितमानस के सौन्दर्य विधान के विभिन्न पदों और रचना–प्रक्रिया की तुलना से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि दोनों काव्यों का सौन्दर्य स्थूल विषयैक्य के स्थान पर सूक्ष्म अंकन पर अधिक निर्भर रहा है। दोनों काव्यों की विषयगत एकता के बावजूद कवि दृष्टि की भिन्नता से दोनों के सौन्दर्य विधान में व्यापक अन्तर दिखलाई देता है। मानसकार ने यद्यपि प्राचीनों का आभार स्वीकार किया है और वाल्मीकी के प्रति वह विशेष रूप से श्रद्धावनत रहा है, फिर भी उसके काव्य की सौन्दर्य सृष्टि वाल्मीकी के काव्य से भिन्न रही है – वाल्मीकी रामायण की तुलना में मानस स्पष्टतः एक स्वतंत्र कला–रचना सिद्ध होती है।

शर्मा शीला (1997), श्रीरामचरितमानस में उपनिषद् प्रभाव, पृष्ठ सं. 240, पूर्वोदय प्रकाशन दरियागंज नई दिल्ली – श्रीरामचरित मानस में उपनिशद प्रभाव – मानस उपनिषद्–भावों को व्यक्त करके समय कभी संक्षिप्त हो जाती है, तो कहीं विस्तृत रूप से विषय को प्रतिपादित करती है, और कहीं केवल कथा–प्रसंग में मूल भाव को व्यक्त करके आगे बद जाती है। जिस प्रकार बालक का ज्ञान वर्द्धन हमारा अभिप्राय होते हुए भी हम उसके सब प्रश्नों का उत्तर एक समान नहीं देते, किसी को विस्तार से समझाते है तो किसी को संक्षेप में, और किसी की चर्चा मात्र करके हम आगे बढ जाते है। मनोविज्ञान के इसी दृष्टिकोण को उदाहरणार्थ रखकर मानस जन–समुदाय की बाल–बुद्धि के अनुसार, जहाँ जितना हितकारी समझती है, वहाँ विषय का वैसा और उतना ही प्रतिपादन करती है।

तिवारी राम जी (1998), भारतीय साहित्य के निर्माता गोस्वामी तुलसीदास पृष्ठ सं. 122, साहित्य अकादमी – गोस्वामी जी ने भक्ति, दर्शन, समाज, संस्कृति आदि सभी क्षेत्रों मे मूल्यवान तत्वों को एकत्र करके अपनी समष्टिवादी समन्वित और समग्र दृष्टि को स्थिर किया। इस दृष्टि की मूलप्रेरणा उनकी क्रान्तिदर्शी, नीर–क्षीर विवेक अन्तर्दृष्टि थी। उनकी दृष्टि में उन्हीं अवांछित तत्वों का निषेध आवश्यक था जिनसे अन्धविश्वास, भ्रान्ति, पाखण्ड, विद्वेश, आडम्बर, आतंक, विभेद, शोषण आदि अमानवीय तत्वों के पनपने की आशंका थी।

शास्त्री चन्द्रकान्त (2003), वाल्मीकि एवं तुलसी साहित्य में राजनीतिक चिंतन (एक तुलनात्मक अध्ययन) – तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में राजनीतिक चिन्तन का उद्भत उदाहरण प्रस्तुत किया है। राजनीति के कुशल संचालनकर्ता में साम, दाम, दण्ड व भेद नीति का प्रमुख उदाहरण प्रस्तुत करते हुए श्रीराम का ही नहीं अपितु, अंगद, सुग्रीव, हनुमान व भरत आदि पात्रों का चरित्र चित्रण प्रस्तुत करते हुए उन्हें राजनीति में कुशल पात्रों के रूप में वर्णित किया है। आदर्श मित्र के साथ साथ आदर्श शत्रु के लक्षण भी प्रस्तुत किये हैं।

गौड, हेमचन्द्र (2003), तुलसी के मानस में नीति तत्व – पृष्ठ संख्या 86– भारतीय आचार शास्त्रों में गुरू भक्ति का बहुत महत्व प्रतिपादित किया गया है। वस्तुतः मानव जीवन में गुरू का अत्यधिक महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व है। माता–पिता तो बालक को जन्म देकर और पाल–पोस कर सयाना करते हैं परन्तु गुरू ही उसे व्यवहारिक शिक्षा देकर समाजोपयोगी मनुष्य बनाता है। उसके उपदेशों से ही व्यक्ति को विविध विषयों एवं किसी कार्य के करने में औचित्य और अनौचित्य का ज्ञान होता है। गुरू हमारे अज्ञान को दूर कर ज्ञान की प्राप्ति करते हैं जिससे हमारे ऐहिक और पारलौकिक सुख शान्ति की प्राप्ति होती है इसीलिए तो महात्मा कबीर ने गुरू को भगवान से भी बड़ा बताया है। तुलसीदास जी ने भी अपने काव्य ग्रन्थों में गुरू में विश्वास एवं उनकी आज्ञा के पालन की ओर संकेत किया है। तुलसी जी के अनुसार गुरू के चरण कमलों का पराग अति सरस एवं सुगन्धित हैं, अनुराग से परिपूर्ण हैं।

अवस्थी, बालकृष्ण (2006), श्री रामचरित मानस में निहित शैक्षिक मूल्यों का अध्ययन, – श्री रामचरित मानस कोरी धार्मिक कहानी, प्रतिदिन पठन–पाठन या अखण्ड रामायण के माध्यम से पुण्य–लाभ की मात्र स्त्रोत ही नहीं है, अपितु इसमें सगुण पंथी, गोस्वामी तुलसीदास के गुरूकुल शिक्षा पद्धति पर प्रकाश डाला गया है। भारतीय शिक्षा प्रणाली में ब्रह्मचर्य पर अत्यधिक बल दिया गया है। वेदकालीन शिक्षा गुरूकुल प्रणाली पर आधारित थी, जिसमें गुरू–शिष्य के मध्य अत्यधिक आत्मीयता के निकट के सम्बन्ध थे। प्राचीन शिक्षा पद्धाति निःशुल्क शिक्षा प्रदान करती थी। रामायणकालीन शिक्षा पद्धति की विशेषता थी एक ऐसा शिक्षक वर्ग तैयार करना जो वेतनभोगी नहीं था। श्री रामचरित मानस में शिक्षा का उद्देश्य छात्र का निर्माण करना एवं व्यवहारिक ज्ञान देना था। गुरूकुल में विद्यार्थी को गुरू पढ़ाता था और वही मूल्यांकन करता था। रामायणकालीन शिक्षा प्रणाली का उद्देश्य ज्ञान के मूल को प्राप्त करना, शिष्य द्वारा मेहनत और परिश्रम से भोज्य पदार्थ अन्न उगाना था। शिक्षा पद्धति सर्वमान्य सिद्धान्तों पर आधारित थी।

पारीक अनीता (2007), सूरदास एवं तुलसीदास के नारी विषयक दृष्टिकोण का तुलनात्मक समाजशास्त्रीय अध्ययन, – कई विद्वानों ने तुलसी को पुरुष वर्ग का पोषक माना हैं उनके मतानुसार तुलसी ने नारी की घोर निन्दा प्रस्तुत कर उसे मानव समाज में अपनी लालसा की पूर्ति करने के लिए अकल्पनीय कृत्य तक करने की अधिकारी बताया है। परन्तु तुलसी साहित्य का प्रज्ञा पूर्वक अध्ययन करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि तुलसी ने नारी को मर्यादित रुप से प्रस्तुत करके उसके दैवीय रूप को प्रस्तुत किया है। शील ही जारी का आभूषण होता है एवं समाज में उसकी भूमिका अतुलनीय होती है।

शैक्षिक दस्तावेजों से सम्बद्ध पूर्व शोधों और कार्यों की समीक्षा

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948–49) – विश्वविद्यालय – देश सभ्यता एवं संस्कृति के रक्षक और पोषक हैं। अतः उन्हें सभ्यता एवं संस्कृति के अग्रदूतों का निर्माण करना चाहिए। प्रजातन्त्र को सफल बनाने के लिए, शिक्षा का प्रसार और ज्ञान की खोज कर सकने वाले व्यक्तियों को उत्पन्न करना चाहिए। शिक्षा को व्यक्ति के जन्मजात गुणों

की खोज करके, उनका विकास करना चाहिए। ट्यूटोरियल कार्य के लिए योग्य शिक्षकों को नियुक्त करना चाहिए। शिक्षकों को अपने व्याख्यान ध्यानपूर्वक तैयार करने चाहिए तथा ट्यूटोरियल कार्य में विशेष रुचि लेनी चाहिए। शिक्षक को योग्य, चरित्रवान और संतोषी होना आवश्यक है। विश्वविद्यालयों की आर्थिक दशा को सुधारा जाये तथा ऋणों से मुक्त किया जाये। पदोन्नति का आधार शिक्षक योग्यता हो। व्यावसायिक शिक्षा, अध्यापक का प्रशिक्षण, इंजीनियरिंग एवं प्रौद्योगिक शिक्षा, चिकित्सा का कार्य, महिलाओं का शिक्षा तथा धर्म से सम्बन्धित विषय की शिक्षा को प्रमुखता देनी चाहिए। अध्यापकों को प्रशिक्षण देने वाली संस्थाओं में पुस्तकीय ज्ञान की अपेक्षा व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करने पर विशेष बल दिया जाना चाहिए। पाठ्यक्रम समय की मांग के अनुसार एवं सामयिक और स्थानीय आवश्यकताओं के महत्व का होना चाहिए। शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों में सामान्य और विशेषीकृत शिक्षा में समन्वय स्थापित किया जाना चाहिए। धार्मिक ग्रन्थों के मूल तत्व का अध्ययन द्वितीय वर्ष के छात्रों को कराया जाना चाहिए तथा धर्म–दर्शन के तत्वों एवं समस्याओं का अध्ययन तृतीय वर्ष के छात्रों को कराना चाहिए। राष्ट्रभाषा, अंग्रेजी तथा प्रादेशिक भाषा का अच्छा ज्ञान विश्वविद्यालयों तथा उच्चतर माध्यमिक स्कूलों के छात्रों को दिया जाय। स्वास्थ्य, खेलकूद, व्यायाम, शैक्षिक एवं चारित्रिक शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए।

माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952–53) – देश के लिए योग्य, सच्चे, ईमानदार नागरिक तैयार करे, जो उनमें मानसिक परिपक्वता, सत्य–असत्य का ज्ञान, वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास, अन्धविश्वासी और रुढ़िवादी परम्पराओं का त्याग करने की सामर्थ्य आदि विकसित करे, जो उनमें राष्ट्र–प्रेम, भाषण एवं लेखन में स्पष्टता, सामाजिक भावना, अनुशासन, सहयोग की भावना आदि गुण उत्पन्न करे। शिक्षाकाल में व्यावहारिक – व्यावसायिक क्षमता का विकास करने के लिए औद्योगिक और व्यावसायिक शिक्षा का प्रावधान होना चाहिए। आत्माभिव्यक्ति तथा मानव व्यक्तित्व के विकास के लिए साहित्यिक, कलात्मक और सांस्कृतिक रुचियों का विकास करना चाहिए।

शिक्षा आयोग (1964–66) – शिक्षा को जनता के जीवन, आवश्यकताओं तथा आकांक्षाओं से सम्बद्ध करना आवश्यक है ताकि सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तन का शक्तिशाली साधन बनाया जा सके। जन–शिक्षा की समान विद्यालय

(कॉमन स्कूल) पद्धति लागू की जाए। सामाजिक और राष्ट्रीय सेवा को शिक्षा का अभिन्न अंग बनाया जाए। समुचित भाषानीति का विकास किया जाए। राष्ट्रीय चेतना का विकास करने के लिए सांस्कृतिक सम्पदा का पुनर्मूल्यांकन किया जाए। शिक्षा का उद्देश्य मात्र सूचनाएँ प्रदान करना नहीं अपितु जिज्ञासा उत्पन्न करना है, समुचित रुचियों, अभिवृत्तियों और मूल्यों का विकास करना है, स्वतन्त्र अध्ययन, चिन्तन और विवेक के कौशल का विकास करना हैं। शिक्षा द्वारा सामाजिक और राष्ट्रीय एकता सिद्ध करने की दृष्टि से समान विद्यालय (कॉमन स्कूल) पद्धति अपनाने (अर्थात् अमीर–गरीब सबके बच्चों के लिए एक से विद्यालय) समुचित भाषा नीति और राष्ट्रीय चेतना का विकास करने, सामाजिक राष्ट्रीय सेवा को अनिवार्य बनाने और प्रजातांत्रिक मूल्यों का विकास करने का सुझाव दिया। इसके लिए अतिरिक्त शिक्षा का आधुनिकीकरण करने और सामाजिक, नैतिक, अध्यात्मिक मूल्यों का विकास करने की आकांक्षाओं, आवश्यकताओं और जीवन से जोड़ा जा सकेगा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) – शिक्षा को कारगर बनाने के लिए शिक्षकों की जवाबदेही निश्चित करने और छात्रों को कर्त्तव्यबोध कराने पर बल दिया गया। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 द्वारा घोषित 10 + 2 + 3 शिक्षा संरचना को पूरे देश में अनिवार्यरूप से लागू करने पर बल दिया गया। इस नीति के क्रियान्वयन के लिए पूरी कार्य योजना विस्तृत रूप से प्रस्तुत की गई। माध्यमिक स्तर पर गति निर्धारक विद्यालय खोलने की घोषणा की गई। प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य एवं निःशुल्क करने की बात की गई है। विद्यालय में व्यवस्थागत सुधार करने की बात की गई जो "आपरेशन ब्लेक बोर्ड" में क्रियान्वित किया गया हैं कक्षा 4 से 5 तक प्रचलित पाठ्यक्रम बुनियादी शिल्प तथा सम्बन्धित कला (कला, कताई, बुनाई, पुस्तक, शिल्प, धातुकला, चर्मकला, सिलाई, गृहशिल्प) होंगे। सामान्य दस वर्षीय पाठ्यचर्या एक अभूतपूर्व परिवर्तन है। उसमें सर्वमुखी शिक्षा हेतु भाषा तथा गणित के साथ साथ विज्ञान, सामाजिक विज्ञान तथा नैतिक, शारीरिक, समाजोपयोगी उत्पादन कार्य एवं समाज सेवा की सामान्य शिक्षा की सुविधा उपलब्ध है।

<u>प्राथमिक स्तर पर</u> – सांस्कृतिक जागरुकता के परिप्रेक्ष्य में पाठ्यपुस्तक में संशोधन, सामूहिक गान, चित्रकला, नृत्य खेल प्रतिमा, मिट्टी के कार्य पर बल देना चाहिए।

पेन्टिंग, कठपूतली, लोकगीत व लोकनृत्य द्वारा शिक्षण तथा प्रदर्शन का आयोजन होना चाहिए। भ्रमण का आयोजन, विशेष पुस्तकें, शैक्षिक सामग्री तथा दृश्य–श्रव्य सुविधाओं की व्यवस्था, सांस्कृतिक गतिविधि कक्षाओं की व्यवस्था तथा सामुदायिक सहयोग का संस्थानीकरण करने पर बल दिया गया है।

<u>उच्च प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर</u> – कम से कम एक कोर रिसोर्स शिक्षक, पाठ्यक्रम में प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक विरासत को उचित स्थान, एस.यू.पी. डब्ल्यू. कार्य द्वारा सांस्कृतिक प्रदर्शन व प्रशिक्षण, सांस्कृतिक किट, सांस्कृतिक पुनरुत्थान हेतु पुरस्कार व प्रोत्साहन देने तथा सांस्कृतिक सम्मेलनों का आयोजन करने पर बल दिया गया है।

<u>विश्वविद्यालय स्तर पर</u> – ललित कला विभाग की स्थापना, पेंटिंग, आर्ट गैलेरी, मूर्तिकला के लिए प्रथम स्थान की व्यवस्था, ड्रामा, नृत्य, साहित्य, संगीत, आदि समूहों का गठन, राज्य व राष्ट्रीय स्तर की प्रतियोगिताओं के आयोजन पर बल दिया गया है।

<u>संशोधित शिक्षा नीति एवं कार्य योजना 1992</u> – राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के दो सुझाव सरकार को अच्छे लगे पहला कि ब्लेक–बोर्ड योजना का लाभ उच्च प्राथमिक विद्यालयों को भी पहुंचाया जाए तथा दसूरा यह कि उच्च शिक्षा को धीरे–धीरे स्वपित्तपोषित बनाया जाए। अतः सरकार ने कार्य योजना में कुछ संशोधन करके संशोधित कार्य योजना 1992 के रुप में प्रकाशित कर दिया।

N.C.F.S.E. 2000 में की गई अनुशंसाएँ – बहुलवादी समाज में शिक्षा को राष्ट्रीय प्रणाली के रूप में मजबूत बनाना। पाठ्यक्रम सुधारों में प्रणालीगत परिवर्तन। सभी बच्चों (विद्यार्थियों) के लिए शिक्षा की गुणवत्ता निश्चित करना। अन्तर्दृष्टि पर आधारित पाठ्यक्रम/भार विहीन शिक्षा। समानता और धर्मनिरपेक्षता जैसे मूल्यों व सामाजिक न्याय के रूप में पाठ्यक्रम निर्माण। सीखने के संबंध में पुनर्विन्यास। शिक्षार्थियों के विकास और नैदानिक शिक्षा के संबंध में समग्र दृष्टिकोण। कक्षा में समावेशी वातावरण। सक्रिय अधिगम, रचनात्मकता का विकास। विद्यार्थियों के विचार, जिज्ञासा और प्रश्नों के लिए उदार व व्यापक दृष्टिकोण। ज्ञान का व्यावहारिक निर्माण। स्थानीय ज्ञान और बच्चों के अनुभवों को प्राथमिकता। पर्यावरण संबंधी परियोजनाओं को शुरु

करने में बच्चों का योगदान। विद्यार्थियों की क्षमता, दृष्टिकोण, हित और ज्ञान विकास हेतु प्रक्रिया का आयोजन। भाषा–कौशल–भाषण और सुनने, पढ़ने और लिखने हेतु स्कूल विषयों में कटौती तथा वरिष्ठ माध्यमिक कक्षाओं के माध्यम से प्राथमिक कक्षाओं को मान्यता दी जानी चाहिए। त्रिभाषा–सूत्र पर बल। गणित–ज्ञान व कल्पना प्रमुख। विज्ञान–पर्यावरण से सम्बद्ध कर–विज्ञान शिक्षण व्यापक संदर्भ में हो। सा. विज्ञान–इतिहास, नागरिक शास्त्र को एक आकार देने के साथ अल्पसंख्यकों (हाशिये समूह) के प्रति संवेदनशीलता। शांति शिक्षा, शिक्षक के लिए एक घटक के रूप में हो। नियोजन, सहभागिता, लोकतांत्रिकव्यवस्था सांस्कृतिक विकास, विकलांग व स्वस्थ सभी की भागीदारी (सबसे व सभी को सीखना आवश्यक), आत्मअनुशासन, उत्साहजनक चिंतनशील सोच को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। नए सिरे से सोचने पर आधारित – अनुपूरक किताबें, कार्यपुस्तिकाएँ, शिक्षकों के लिए हैंड बुक से नए दृष्टिकोण का विकास। गुणवत्ता, सार्थक शैक्षिक नियोजन। अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम। सेवारत शिक्षा स्कूल प्रथाओं में परिवर्तन के लिए उत्प्रेरक की आवश्यकता है। तनाव को कम करने और परीक्षाओं में सफलता बढ़ाने की जरूरत।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 NCERT पब्लिकेशन, नई दिल्ली पृष्ठ सं. 142–117 – स्कूल कक्षा और संबंधित शैक्षिक स्थल दरअसल वे स्थान होते हैं जहाँ सार्वाधिक महत्वपूर्ण शैक्षिक क्रियाकलाप होते हैं। ये वे स्थान होने चाहिए जहाँ विद्यार्थियों को अनुभव मिलें जो वांछित शैक्षिक उद्देश्यों को पाने में सहायक हों। विद्यार्थियों, शैक्षिक उद्देश्यों, ज्ञान की प्रकृति एवं सामाजिक जगह के रूप में स्कूल की समझ, कक्षा में चल रही गतिविधियों को निर्देशित करने के सिद्धान्तों तक पहुँचने में मदद कर सकती है। शैक्षिक उद्देश्य लोकतंत्र, समानता, न्याय, स्वतंत्रता, परोपकार, धर्मनिरपेक्षता, मानवीय गरिमा व अधिकार तथा दूसरे के प्रति आदर जैसे मूल्यों के प्रति प्रतिबद्धता रखने वाले होने चाहिए। स्कूलों द्वारा ऐसे अवसर प्रदान किए जाने चाहिए ताकि बच्चे प्रश्न पूछकर और चर्चा एवं चिंतन कर अवधारणाओं को आत्मसात करें या नए विचार रचें। बच्चे अपने खुद के अनुभवों से, धर एवं समुदाय के सदस्यों के अनुभवों से, पुस्तकालयों से और स्कूल के बाहर अन्य स्त्रोंतो से ज्ञान तलाश सकते हैं।

इस संदर्भ में अधिगम की दृष्टि से सांस्कृतिक विरासत स्थल बेहद महत्वपूर्ण बन जाते हैं।

कुमावत, देवकीनन्दन (2014), राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 की अनुशंसाओं के प्रति शिक्षकों की जागरूकता का अध्ययन – राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रुपरेखा 2005 की अनुशंसाओं के प्रति जागरुकता औसत मध्यमान से अधिक हैं। CBSE एवं BSER से सम्बद्ध विद्यालयों के शिक्षकों की N.C.F. 2005 की अनुशंसाओं के प्रति जागरुकता मापनी में कोई अन्तर नहीं है। CBSE एवं BSER से सम्बद्ध विद्यालयों के शिक्षकों की N.C.F. 2005 की अनुशंसाओं के प्रति जागरुकता प्रमापनी के आयामों क्रमशः गुणवत्ता आयाम, पाठ्यचर्या एवं व्यवहार के लिए निहितार्थ, आंकलन एवं मूल्यांकन, बच्चों की भागीदारी व शिक्षक शिक्षा पर विद्यालय से सम्बद्ध बोर्ड की भिन्नता का कोई सार्थक अन्तर नहीं होता। CBSE विद्यालय के पुरुष व महिला शिक्षकों की N.C.F. 2005 में भी अनुशंसाओं के प्रति जागरुकता में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता। CBSE विद्यालयों में जागरुकता प्रमापनी के आयाम गुणवत्ता, आंकलन, मूल्यांकन बच्चों की भागीदारी व शिक्षक शिक्षा पर लिंग भेद की भिन्नता का कोई सार्थक अन्तर नहीं है। CBSE विद्यालयों के पुरुषों एवं महिला शिक्षकों के प्रति जागरुकता मापनी के आयाम पाठ्यचर्या एवं व्यवहार के लिए निहितार्थ पर लिंग भेद की भिन्नता का सार्थक अन्तर पाया गया।

6. Research Gaps identified in the proposed field of investigation. (Based on the review)

समय के अनुसार समाज में परिवर्तन होते रहते हैं और सामाजिक परिवर्तन के साथ–साथ शैक्षिक विचारधारा, शैक्षिक आवश्यकता एवं विभिन्न शैक्षिक परिस्थितियों एवं पक्षों में भी परिवर्तन होता रहता है। जैसे – दार्शनिक, समाजशास्त्रीय एवं शैक्षिक आदि पक्षों का। रामचरितमानस एक धार्मिक ग्रन्थ होने के साथ–साथ किस रूप में शिक्षा का आगार है ? रामचरितमानस में निहित दार्षनिक, समाजशास्त्रीय एवं शैक्षिक पक्षों का विद्यालय व्यवस्था के सन्दर्भ में कोई भी शोधकार्य अथवा अध्ययन प्राप्त नहीं हुआ है। इन सभी पक्षों का N.C.F. 2005 में किस रूप में उल्लेख हुआ है ? चूंकि

रामचरितमानस लगभग 500 वर्ष पूर्व का ग्रन्थ है जो केवल धार्मिक ग्रन्थ के रूप में ही देखा जाता है जब कि क्या उसमें शैक्षिक तत्व एवं विद्यालयी सन्दर्भों में भी मान्यताएँ या मार्गदर्शन उपलब्ध है ? ऐसी पुष्टि करने वाले अध्ययनकार्य लगभग नगण्य है। रामचरितमानस को एक समन्वित करने वाला ग्रंथ माना गया है, क्या यह ग्रन्थ शिक्षा का समन्वय भी प्रस्तुत करता है ? रामचरितमानस में बताये गये विभिन्न पक्षों क्रमशः दार्शनिक, समाजशास्त्रीय एवं शैक्षिक की वर्तमान समय में क्या आवश्यकता है ? N.C.F. 2005, जो कि लगभग 10 वर्ष से अधिक पुराना नहीं है, इसमें ऐसे कौन–कौन से पक्ष हैं जो रामचरितमानस से समानता रखते हैं ? तथा कौन–कौन से ऐसे पक्ष हैं जिनकी N.C.F. 2005 में आवश्यकता महसूस नहीं की गई ? N.C.F. 2005 भी समावेशी व समन्वयवादी शिक्षा की अनुशंसा करता है तथा रामचरितमानस की समन्वयवादी सामाजिक, दार्शनिक व पारिवारिक व्यवस्था के आदर्श प्रस्तुत करता है। N.C.F. 2005 की प्रस्तावना में संवैधानिक दर्शन, समाजशास्त्रीय व्यवस्था व मूल्यों की बात की गई है वहीं रामचरितमानस का बालकाण्ड भी उक्त क्षेत्रों में चर्चा करता है। अतः प्रस्तुत अध्ययन के माध्यम से यह ज्ञात करने का प्रयास किया जायगा कि विद्यालयी संदर्भों में उक्त ग्रंथ व दस्तावेज क्या, महत्व रखते हैं ? अथवा नहीं रखते हैं ? और रखते हैं तो कितना रखते हैं ?

रामचरितमानस पर कई शोधार्थियों ने शोध कार्य किये हैं, परन्तु उनका लक्ष्य मानस में निहित श्रृंगार, काव्यकला एवं राजनीतिक विचारों आदि तक ही सिमटकर रह गया है। रामचरितमानस में निहित शैक्षिक, सामाजिक, दार्शनिक पक्षों के साथ–साथ शिक्षक, शिक्षार्थी, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियों व्यवस्थागत सुधारों से सम्बन्धित पक्षों को लेकर N.C.F. 2005 के साथ तुलनात्मक अध्ययन आज तक नहीं हुआ है। अतः प्रस्तावित अध्ययन कार्य के माध्यम से शिक्षक की स्वायत्तता,बच्चों के अधिकार, सक्षम बनाने वाले विद्यालयी वातावरण के पोषण, विद्यालयी कक्षा वातावरण, मूल्यों, शान्ति के लिए शिक्षा, शिक्षण अधिगम प्रक्रिया आदि के सन्दर्भों में रामचरितमानस एवं N.C.F.–2005 का दार्शनिक, समाजशास्त्रीय एवं शैक्षिक पक्षों के सन्दर्भ में, अध्यापकों के अभिमत में विद्यालयी व्यवस्था के सम्बन्ध में तुलनात्मक अध्ययन किया जाएगा।

7. Major Hypothesis, if any –

परिकल्पना – प्रस्तुत शोध में शून्य परिकल्पना का प्रयोग किया जाएगा।

1. रामचरितमानस के दार्शनिक, समाजशास्त्रीय एवं शैक्षिक पक्षों के सन्दर्भ में विद्यालयी व्यवस्था के सम्बन्ध में अध्यापकों के अभिमत में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता।
2. N.C.F.– 2005 के दार्शनिक, समाजशास्त्रीय एवं शैक्षिक पक्षों के सन्दर्भ में विद्यालयी व्यवस्था के सम्बन्ध में अध्यापकों के अभिमत में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता।

8. न्यादर्श

वर्तमान शोध कार्य के सन्दर्भ में अध्ययन करने हेतु शोधकर्ता द्वारा अजमेर जिले व पाली जिले को अध्ययन क्षेत्र के रूप में चुना जाएगा। कुल 400 अध्यापकों को न्यादर्श के रूप में चयनित किया जाएगा। जिसमें से 200 माध्यमिक विद्यालयों एवं 200 उच्च माध्यमिक विद्यालयों के अध्यापकों को न्यादर्श के रूप में चयनित किया जाएगा। जिसमें प्रत्येक विद्यालय प्रकार के 100 पुरूष अध्यापकों एवं 100 महिला अध्यापकों को न्यादर्श के रूप में चयनित किया जाएगा।

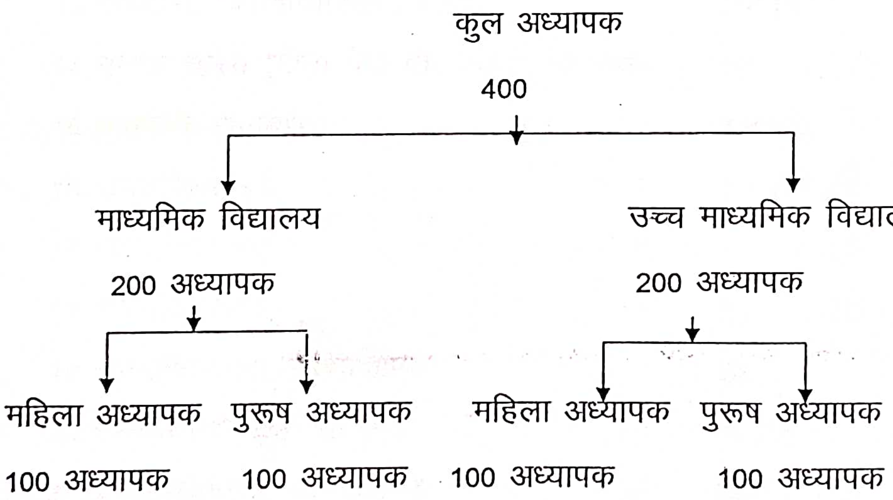

9. Research Methodolgy – शोध विधि

- प्रस्तावित शोध में वर्णनात्मक –सर्वेक्षण विधि एवं साक्षात्कार विधि का प्रयोग किया जाएगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. पंडित रघुनंदन शर्मा, वैदिक सम्पत्ति, नई दिल्ली : दयानन्द संस्थान, 1983, पृष्ठ सं. 36–114

2- F.W. Thomas, The History and Prospects of British Education in India, P.I.

3. रामचरित मानस बालकाण्ड दोहा – 1/1–21
4. रामचरित मानस बालकाण्ड – 60/8
5. रामचरित मानस बालकाण्ड – 208/8
6. रामचरित मानस बालकाण्ड दोहा – 293
7. रामचरित अयोध्याकाण्ड दोहा – 3/5
8. मनुस्मृति – 7,198
9. रामचरित मानस लंकाकाण्ड – 8–10/37
10. रामचरित किष्किन्धा काण्ड – 2/18
11. रामचरित उत्तराकाण्ड – 45
12. किष्किन्धाकाण्ड – 5/17
13. रामचरित किष्किन्धाकाण्ड दोहा – 2/18
14. मानस रहस्य (गीता प्रेस गोरखपुर) पृष्ठ संख्या 30
15. वाल्मीकि रामायण – 1.80.26
16. रामचरितमानस – 2/277/2
17. रामचरितमानस – 4/7/2,3
18. रामचरितमानस – 2/72/2,3
19. रामचरितमानस अरण्यकाण्ड – 33
20. रामचरितमानसउत्तराकाण्ड – 45/8
21. रामचरितमानस अरण्यकाण्ड – 34/1
22. तोमर, लज्जाराम, (2000) प्राचीन भारत शिक्षा दर्शन–सुरुचि प्रकाशन नई दिल्ली पृष्ठ संख्या 69–72

शोध ग्रन्थ

1. भारतीय साहित्य के निर्माता गोस्वामी तुलसीदास 1998 तिवारी राम जी।
2. वाल्मीकि एवं तुलसी साहित्य में राजनीतिक चिंतन (एक तुलनात्मक अध्ययन) – 2003 शास्त्री चन्द्रकान्त
3. तुलसी के मानस में नीति तत्व 2003– गौड़ हेमचन्द्र।
4. श्री रामचरित मानस में निहित शैक्षिक मूल्यों का अध्ययन 2005–2006 – अवस्थी बालकृष्ण
5. सूरदास एवं तुलसीदास के नारी विषयक दृष्टिकोण का तुलनात्मक समाजशास्त्रीय अध्ययन–2007, पारिक अनिता।
6. विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग 1948–49
7. माध्यमिक शिक्षा आयोग 1952–53
8. शिक्षा आयोग 1964–66
9. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986
10. संशोधित शिक्षा नीति एवं कार्य योजना 1992
11. N.C.F.S.E. 2000
12. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005
13. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 की अनुशंसाओं के प्रति शिक्षकों की जागरूकता का अध्ययन कुमावत देवकीनन्दन – 2013–14

सन्दर्भ

मूल आधार ग्रंथ :– रामचरित मानस

तुलसी के अन्य ग्रन्थ :– विनय पत्रिका, दोहावली, तुलसी–सतसई, कवितावली, गीतावली, बरवै रामायण, कृष्ण गीतावली, रामललानहछू, जानकी मंगल, पार्वती मंगल, वैराग्य संदीपनी।

तुलसी काव्य पर आलोचनात्मक ग्रन्थ

1. तुलसीदास – दास डॉ. श्यामसुन्दर
2. तुलसीदास – गुप्त डॉ. माता प्रसाद
3. तुलसीदास – पाण्डेय चन्द्रवली
4. तुलसीदास – शुक्ल आचार्य रामचन्द्र
5. तुलसदर्शन – मिश्र डॉ. बलदेव प्रसाद
6. तुलसी और उसका युग – दीक्षित डॉ. राजपति
7. तुलसी और उनका काव्य – त्रिपाठी रामनरेश
8. तुलसी रसायन – मिश्र डॉ. भगीरथ
9. तुलसी साहित्य की भूमिका – भट्नागर श्री रामरतन
10. तुलसी साहित्य रत्नाकर – द्विवेदी पं. रामचन्द्र
11. मानस में रामकथा – पं. परशुराम
12. मानस रहस्य – त्रिपाठी पं. विजयानन्द
13. रामचरित मानस की भूमिका – गौड श्री रामदास

अन्य ग्रन्थ

1. धर्मनीति – महात्मा गाँधी, दिल्ली, 1950 ई. ।
2. नीतिशास्त्र – डॉ. जे. एन. सिन्हा
3. नीति सिद्धान्त और अध्ययन – बाबू गुलाबराम
4. शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त – डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत
5. हिन्दी नीति साहित्य – डॉ. भोलानाथ तिवारी

6. चिन्तामणी भाग I – आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

7. तुलसी सूक्ति सुधा – सम्पादक वियोग हरि, बनारस

8. चाणक्य नीति दर्पण – टीकाकार अभिमन्यु, काशी

9. प्रसन्न राघव – जयदेव, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई

10. साहित्यालोचन – डॉ. श्यामसुन्दर दास

11. प्राचीन महाकवि – रामलाल सांवल

12. पंचतन्त्र – विष्णुगुप्त

13. श्रीमद्भागवत् गीता – गीता प्रेस, गोरखपुर

14. शिक्षा में नवचिन्तन – प्रो. रीता अरोड़ा

15. मानस रहस्य – पं. विजयानन्द त्रिपाठी

16. मानस सूक्त – पृष्ठ 110

17. हिन्दी साहित्य में राम – डॉ. पुरन्दरदास

कोश एवं विश्वकोश

- आदर्श शब्दकोश
- डिक्शनरी ऑफसोशियोलॉजी
- भार्गव आदर्श शब्दकोश
- राजपाल हिन्दी शब्दकोश
- ब्रिटानिका एनसाइक्लोपीडिया

पत्र–पत्रिकाएँ

- जनसत्ता दैनिक
- दैनिक हिन्दुस्तान
- नवभारत टाइम्स (हिन्दी दैनिक)

- परिप्रेक्ष्य
- प्रारम्भ (शैक्षिक संवाद)
- राष्ट्रीय सहारा दैनिक
- शिक्षा विमर्श
- कल्याण के रामायणंक – गीता प्रेस गोरखपुर
- साहित्य सन्देश
- सम्मेलन पत्रिका

Signature of Candidate with Date

Outline Approved

Name & Signature of Supervisor
with Date & Seal